International Journal of Scientific Research in Science and Technology
© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X

महिला लेखन का उत्तरदायित्व

डॉ शशी सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, महाराजा अग्रसेन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

सारांश

(सांस्कृतिक संक्रमण काल में महिला लेखन का उत्तरदायित्व)

आज जिस युग में हम साँस ले रहे हैं वह विभिन्न संस्कृतियों का 'संक्रमण काल' है। विशेषतया भारतीय एवं पाश्चात्य संस्कृति के समागम का। इस संक्रमण के दौर में भारतीय संस्कृति का अस्तित्व खतरे में नजर आ रहा है। क्योंकि भारतीय मानव को यदि गौर से देखा जाए तो वह भी बेमेल संगम या अवांछित मिश्रण सा नजर आता है। यह संगम फूल में सुगंध का नहीं है, अपितु दूध में नींबू का है। नींबू जिस प्रकार दूध के अस्तित्व को समाप्त कर उसे नया रूप देता है, उसी प्रकार भारतीयों ने पाश्चात्य संस्कृति को अपनाने के कारण कार्टून जैसा नया रूप धारण कर लिया है। वह भूल जाता है कि पूर्वजों द्वारा संचित जिस संस्कृति में आज तक वह जी रहा था, उसमें युगों-युगों के संचित संस्कार, ऋषि मुनियों के उच्च विचार तथा अनेक महात्माओं एवं धीर-वीरों के व्यवहार है, जो उसे शोभा प्रदान करते हैं।

शब्द कूंची - संस्कृति, सभ्यता, महिला लेखन, विरोधाभास, समाज और परिवार

वस्तुतः आचार विचारादि का धर्मानुसार पालन करना ही संस्कृति कहलाता है। हमारी बोलचाल की भाषा, उठने-बैठने के तौर-तरीके, जीवन के उपकरण, खान-पान, रीति-रिवाज, तीज़-त्यौहार आदि में लालित्य लाने का श्रेय संस्कृति को जाता है। संस्कृति का समानान्तर शब्द है - सभ्यता। सभ्यता मानव की भौतिक विचारधारा की सूचक है तो संस्कृति आध्यात्मिक एवं मानसिक विकास की। सभ्यता बाह्य है तो संस्कृति आम्यन्तर। संस्कृति को अपनाने में लंबा समय लगता है पर सभ्यता का अनुकरण सरलता से किया जा सकता है। सभ्यता संस्कृति के साथ इस प्रकार घुली-मिली है कि उसे अलग करना संभव नहीं। यही स्पष्ट करने का प्रयास है।

गहराई से विचार करने पर स्पष्ट होता है कि सभी प्राणियों को एक सूत्र में पिरोने वाली, पराये दुख को अपना समझने वाली, एक ही प्रसन्नता पर संपूर्ण गाँव में खुशी की लहर, एक की बेटी पूर गाँव की बेटी, जहाँ इस प्रकार की भावनाएँ और गहरे रिश्ते हो वहाँ की संस्कृति कितनी गहरी पैठ लिए हुए है। इसका अनुमान लगाना सहज नहीं। क्यों, ब्राह्य रूप से विभिन्नता होने पर हमारा अन्तर्मन आज भी राम-कृष्ण से जुड़ा हुआ है? क्यों अग्नि के सात फेरे आज भी सभी के लिए उतना ही महत्व रखते हैं? क्योंकि भारतीय संस्कृति में अनेकों विशेषताएँ, जैसे-आध्यात्मिकता, विश्वबन्धुत्व, सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय, अनेकता में एकता व सौहार्द्रता है। इन्हीं विशेषताओं के कारण ही कशमीर से कन्याकुमारी तक भारत की आत्मा एक है।

प्रस्तावना

युगानुरूप संस्कृति स्वतः अपना रूप-रंग बदलती जाती है, किन्तु सैंकड़ों वर्षों के निरन्तर प्रवाह में उसमें इतना कूड़ा कचरा

भी आ समाता है कि संस्कृति रूपी गंगा मैली होकर बहने लगती है। विभिन्न संस्कृतियों के इस संक्रमण काल में भारतीय संस्कृति अत्याधुनिक वैज्ञानिकता और प्राचीन जड़वत्ता के कारण कई विरोधाभासों में उलझ गई है। आज संस्कृति का अभिप्राय - सांस्कृतिक कार्यक्रम यानि फिल्मी ढंग का नाच-गाना मात्र रह गया है। इसलिए संस्कृति के साथ व्यक्ति और समाज का रिश्ता अपकर्ष में परिवर्तित हो रहा है। आज सारे मानवीय क्रिया-कलाप धन और उत्पादन पर केंद्रित होकर भोगवाद पर स्थित हो गए है। इसी भोगवादी प्रवृत्ति के कारण मानव अधिक विध्वसंक या हिंसात्मक हो गया है।

पथ भ्रष्ट व प्रदूषित मन रूपी सारथी के कारण मानव दिशाभ्रमित हो गया है। पाश्चात्य संस्कृतियों का संक्रमण उसे इस तरह से नष्ट कर रहा है कि वह अहर्निश सांस्कृतिक अराजकता के घेरे में खड़ा संवेदनशून्य हो गया है। भारतीय क्षितिज पर उभरती विभिन्न राष्ट्रों की होड़, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की आपाधापी एवं भोगवादिता के कारण व्यक्ति आज एकांगीपन का अहसास करता है, जो उसकी अंतर्रात्मा को कचोटता है। जिसका प्रतिक्रियात्मक रूप उसके घर परिवार व समाज में तनाव के बिंदु के रूप में सामने आता है। परिणामतः भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों का विघटन हिंसा, द्वेष, घृणा, अपराध, स्वार्थपरकता जैसी वृत्तियों में परिवर्तित हो रहा है। संस्कृति स्वयं अपसंस्कृति का पर्याय बन गई है।

यहाँ मैं कहना चाहूँगी कि अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा के लिए संस्कृतियों में समागम तो अवश्य होना चाहिए किंतु विवेक के साथ। अविवेकपूर्ण समागम घातक सिद्ध होता है। ऐसे में आवश्यकता है ऐसी व्यापक व गहरी सोच की, जिसमें हमारी संस्कृति की जड़ें उतनी गहराई तक रोपित हों, जहाँ तक पाश्चात्य आँधी का बंवडर भी उसे धराशायी करने में असफल रहे। तभी हम विश्वबंधुत्व की भावना से प्रेरित होकर प्रगति के पथ पर अग्रसर होंगे। यह तभी संभव है जब महिला लेखिकाएँ इसका उत्तरदायित्व समझ, ऐसी कृतियों की रचना करें, जिससे संस्कृति की रक्षा की जा सके, बहुमूल्य जीवन मूल्य उसमें वर्णित किए जाएं।

विभिन्न महिला कथाकारों जैसे - महावेवी वर्मा, चंद्रकांता, मृदुला गर्ग, चित्र मुद्गल, शशिप्रभा शास्त्री, शिवानी, मन्नु भंडारी, कृष्णा सोबती, निरूपमा सेवती आदि ने ऐसे पात्रों को चित्रित किया है जो भारतीय आदर्शों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

महादेवी वर्मा के साहित्य में भारतीय संस्कृति के अनेक उदात्त मूल्य विभिन्न व्यक्तियों के माध्यम से उभर कर आए हैं। जैसे 'चीनी फेरी वाला' रेखाचित्र में माँ की ममता, बहन का स्नेह, विमाता का उत्पीड़न, दीनता और जीवन-संघर्ष के अनुभव उभर कर सामने आये हैं। परिवार की बलिवेदी पर नारी अपना जीवन कैसे समर्पित कर देती है, इसका प्रत्यक्ष चित्रण 'मन्नु की माई' के माध्यम से मिलता है। महादेवी के सभी पात्र भारतीय संस्कारों का प्रतिनिधित्व करते है, वे शिष्टता, कर्मठता, कर्त्तव्यनिष्ठता, स्वाभिमानी, दया, क्षमाशील, परोपकारी आदि गुणों से सराबोर है। उसमें जांति-पांति या वर्ग समाज का भेदभाव नहीं है। महादेवी वर्मा का संकेत है कि आज समभाव के युग में मानव द्वारा दूसरे का शोषण एवं क्रूर उत्पीड़न असह्य एवं निंदनीय है, यह हमारी सांस्कृतिक प्रगति को पंगु बनाता है और हमें अधिक बौना।

सांस्कृतिक प्रगति को अत्यधिक पंगु बनाया है, आधुनिक अव्यवहारिक शिक्षा पद्धति ने। प्राचीन काल में शिक्षा औपचारिक न होकर संस्कृति का एक अंतर्निहित अंग थी। सभ्यता के विकास क्रम एवं सांस्कृतिक संक्रमण काल में शिक्षा ने अनेक संस्थागत माध्यमों के कारण एक व्यवस्था का रूप ले लिया है। जहाँ किसी शिक्षण संस्थान में चले जाइए, लगता है, सिनेमाघर के बाहर का दृश्य देख रहे है। क्लासें खाली, खेल का मैदान खाली, कैन्टीनें भरी हुई, पढ़ाई के नाम पर चाय की प्यालियाँ, सीढ़ियों पर बैठे विद्यार्थी सिगरेट के कश के साथ खोखली हँसी, तथा गपशप में मशगूल नजर आते हैं। यह सब एशपरस्त ओर अकर्मण्य व संस्कृतिविहीन मानसिकता की देन है। फलतः आधुनिक युवा पीढ़ी अपने जीवन मूल्य स्वयं निर्धारित कर रही है।

हमारी अपनी संस्कृति से पोषित न होने के कारण और पाश्चात्य संस्कृति के अंधानुकरण के कारण, दूसरी ही दुनिया में उड़ने वाले ये युवा भटकाव की अवस्था में विभिन्न नशों के शिकार होकर, सृजनात्मक भारतीय संस्कृति से कोसों दूर हो जाते हैं।

प्रश्न उठता है कि क्या शिक्षा का उद्देश्य अच्छा इंसान बनाना है या जीविका कमाने योग्य बनाना? वस्तुतः ये दोनों उद्देश्य एक दूसरे के विरोधी न होकर पूरक है। क्योंकि एक इंजीनियर या डॉक्टर होना उतना ही महत्व रखता है जितना एक अच्छा इंसान होना।

उदात्तीकरण के लिए आवश्यक है कि स्कूल, कॉलेजों के छात्र- छात्राओं को सृजनात्मक कार्यों में लगाया जाए। इसके लिए शैक्षिक सांस्कृतिक गतिविधियों, गोष्ठियों, सेमिनारों, वाद-विवाद प्रतियोगिताओं, नाटक, नृत्य अथवा लेखन में संलग्न कर उन्हें कार्य शक्ति के लिए सही क्षेत्र दिया जा सकता है।

संक्रमण के परिणामस्वरूप ही आज के युवा वर्ग के लिए बुजुर्ग समुदाय घिसी हुई मशीन का वह पुर्जा है, जिसकी मरम्मत भी नहीं की जा सकती। इसलिए बुर्जुग पालक संस्थाएँ चारों ओर फलती-फूलती नजर आती है, जहाँ जाकर देखने पर अहसास होता है कि किस तरह बुजुर्गों को हँसना भी सिखाया जाता है क्योंकि तिरस्कृत बुजुर्ग अपनी हँसी तक भूल गया है। यही है सांस्कृतिक अराजकता एवं संक्रमण का वह विकृत रूप जहाँ माँ-बाप अपने आप को सुरक्षित महसूस नहीं करते।

दूरदर्शन मीडिया की वर्चस्वता संस्कृतिक संक्रमण का भयंकर परिणाम है। दूरदर्शन जिस पोपुलर कल्चर की बात करता है, वह भोगवादी लोगों की सभ्यता है। जो नवजात शिशु का 'पालन पोषण करना' मात्र ही अपना कर्तव्य समझते हैं। वह बच्चा जो भी ज्ञानार्जन करता है वह टी-वी- रेडियो या फिल्मों के माध्यम से। इस इन्द्रजाल में सच्चाई परख पाना सबके वश में नहीं होता। ऐसे युवा नागरिक से देश एवं राष्ट्र को सबल कैसे बनाया जा सकता है।

अधिकांश माता-पिता स्वयं अपनी पीछा छुड़ाने के लिए बच्चों को टी-वी- के हवाले कर देते है वे स्वयं नहीं जानते कि व्यसन और दुराचार की किस दुनिया का द्वार वे खोल रहे हैं। बच्चे जो टी-वी- पर देखते हैं उनसे वे संवेदन शून्यता, स्वार्थपरकता, नास्तिकता, माता-पिता का अनादर, निराशा, कुंठा, छल-प्रवंचना, चोरी, छीना छपटी, बलात्कार पाखंड आदि को अपनी जीवन शैली का अंग बना लेते हैं।

पहले सिनेमा सामाजिक शिक्षा और मनोरंजन का अच्छा मिला-जुला साधन था, आज वह अपराध सिखाने के तरीकों और चोली के पीछे तक पहुँच गया है। साथ ही अश्लीलता की हदों को पार कर गया है। अंग प्रदर्शन, उन्मुक्त प्रेम प्रसंग, बलात्कार, घिनौने दृश्य, मार-धाड़, हिंसात्मक प्रदर्शन फिल्मों में संस्कृतिक संक्रमण का ही परिणाम है। ये सब न होने पर माना जाता है कि फिल्में चलेंगी नहीं। वे भूल जाते हैं कि भारतीय संस्कृति में बहुत कुछ ऐसा है जो आत्मिक स्तर पर वंदनीय है, इसलिए तो फिल्मी पर्दे पर आज भी भारतीय संस्कृति की पोषक आदि इक्का दुक्का कोई फिल्म आती है तो वह स्वर्ण-जयंती मनाती है तथा पूरे विश्व में ख्याति अर्जित करती है।

पाश्चात्य संगीत की मिलावट के कारण भारतीय संगीत अपना अस्तित्व खोता जा रहा है। यह मिश्रित संगीत प्रत्येक युवा भारतीयों के दिलों दिमाग पर इस तरह हावी हो गया है कि उसके विचारात्मक केंद्रों में जंग सा लग गया है। यही कारण है कि शास्त्रीय संगीत के प्रति किसी का रूझान नहीं मिलता।

आज के संक्रमण दौर में आवश्यकता है दूरदर्शन के माध्यम से शैक्षिक, सांस्कृतिक, सामाजिक वातावरण का आधार तैयार करने की, जो बेईमानी, भ्रष्टाचार घोटालों, सांप्रदायिक विवादों जैसे असंख्य मसलों के लिए सूर्य की किरणें साबित हों।

आधुनिक शिक्षा व पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव नारी पर भी पड़ा है, समय की आवश्यकता, बढ़ते आर्थिक पारिवारिक असंतुलन ने उसे यह बतला दिया है कि चिलमन की ओर से झांकने वाली नारी की आवश्यकता नहीं है।

'तिरछी बौछार' उपन्यास में लेखिका मंजुल भगत ने आधुनिक शिक्षा में पढ़ी, पली, प्रेषिता नारी विस्मिता का चित्रण किया है, जो आधुनिक शिक्षा व पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित है। महिला कथाकारों ने माना है कि पुरुष को पग-पग पर पथ निर्देशित करने वाली नारी है। वह अपने स्नेह की पीयूष वर्षा से सभी का मार्ग प्रशस्त करती है। मानवता के प्रांगण में नारी माया ममता का पवित्र दीप प्रज्वलित कर स्नेहमय आलोक वितरित करती है। वह परिवार को टूटने नहीं देना चाहती। नारी शब्द में पवित्रता है। इसमें वह दर्शन है जिसे आसानी से नहीं जाना जा सकता। इसलिए प्रसाद ने कामायनी में कहा है -

''नारी जीवन का चित्र यही, क्या विकल रंग भर देती हो,
जीवन की अस्पष्ट रेखा में, आकार कला को देती हो।''

विभिन्न संस्कृतियों की टकराहट के कारण एवं पारिवारिक घुटन के कारण मानवीय मूल्य अपनी सार्थकता से परे होते जा रहे हैं। वस्तुतः परिवार ही संस्कृति की धरोहर को पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित कर जीवित बनाए रखता है। प्रत्येक व्यक्ति परिवार से ही प्रथम शिक्षा ग्रहण करता है। आज परिवार में भाई-भाई में वह स्नेह कहाँ? पति-पत्नी में वह सौहार्द्रता कहाँ? यहाँ तक कि माँ बेटे के संबंध भी कटुता से भरे हुए हैं। यही है संस्कृतिक संक्रमण का विषैला रूप।

महिला उपन्यासकारों में शिवानी ने विषकथा में 'आपसी व्यक्तिगत स्वार्थ को' पारिवारिक घुटन का कारण बताया है। कृष्णा सोबती ने 'मित्रों मरजानी' में पुरुष की नपुसंकता को इसका कारण बतलाया है। कृष्णा सोबती ने समाज की परंपरागत रूढ़ियों व जकड़बंदी को कभी भी स्वीकार नहीं किया। परंपरागत मान्यताओं के प्रति अस्वीकार और विद्रोह उनकी कृतियों की पहचान है, पर यह विद्रोह निषेधात्मक नहीं है। 'मित्रों मरजानी' की मूल संवेदना 'परिवार और देह' भिन्न संस्कारों की टकराहट से निःसृत है।

यहाँ भारतीय परिवार का जीवंत चित्रण है, जिसमें धनवंती जैसी आदर्श माँ है, जनको जैसी बेटी है, सुहाग और फूलवंती जैसी बहुएँ हैं, इन्हीं के परिवेश में है मित्रों का व्यक्तित्व। वह परिवार को लक्ष्मण को लीक नहीं मानती। परिवार के अनुबंधों को स्वीकार नहीं करती। उसके संस्कार में शरीर ही सबसे बड़ा सत्य है। यदि उसे अच्छी शिक्षा दी गई होती तो वह अपने व्यवहार में परिवर्तन ला सकती थी।

पाश्चात्य संस्कृति की नकल के कारण आज परिवार ओर समाज में गोपनीयता के पर्दे भी पारदर्शी होते जा रहे हैं। परिवार के बीच दैहिक संबंधों में मर्यादा का न होना, नैतिक संस्कारों का अभाव और भोग की पूरी छूट देना ये सभी बच्चों के मानसिक विकास के कारण बनते हैं।

आपका बंटी में मन्नु भंडारी ने एक ऐसे परिवार का उल्लेख किया है, जहाँ पति-पत्नी के मध्य हुए तनावों का दुष्परिणाम बच्चों को भोगना पड़ता है। बालक बंटी अपने माता-पिता को पूर्णतया समझ नहीं पाता है और उसकी स्थिति विचित्र बन जाती है। वह अपने आपको भूल जाता है, लगता है जैसे वह अपनी उम्र से बहुत बड़ा हो गया है?

साथ ही महानगरीय जीवन में परिवारों में समयाभाव का रोना रहता है इसलिए भी माता-पिता परिवार की देखभाल ठीक से नहीं कर पाते हैं। 'पतझड़ की आवाजें' की लेखिका निरुपमा सेवती ने समयाभाव का रोना रोने वाले व्यक्तियों पर व्यंग्य किया है-

''वक्त तो बहुत होता है, हम खुद ही अपनी बेवकूफियों में उसे खो बैठते हैं- बात यह है कि लोग चिंता में ही आधा वक्त खो देते है। घर की चिंता, बाहर की चिंता और कुछ नहीं तो भगवान की चिंता।'' (पृ- 43)

इसी कारण मानवतावादी भावनाएँ सिमट कर रह जाती है। जबकि ग्राम्य जीवन ठीक इसके विपरीत है। वहाँ परस्पर सद्भावनाओं का प्राबल्य है। 'महाभोज' मन्नु भंडारी का ग्रामीण परंपराओं एवं संस्कृति पर पूर्णतः आश्रित उपन्यास है।

इन सभी दुष्परिणामों से बचने के लिए, शैशवास्था से ही बच्चे के पालन-पोषण में उचित अनुनित का विवेक, निर्णय शक्ति की प्रबलता का विकास किया जाना चाहिए जिसमें घर, परिवार, विद्यालय सभी अहं भूमिका अदा करते हैं। तभी वह सांस्कृतिक संक्रमण से बच सकता है, क्योंकि अधकचरा ज्ञान व्यक्ति को कहीं का नहीं रहने देता।

संयुक्त प्रणाली के विघटन के कारण भी पाश्चात्य संक्रमण ने हमें घेर लिया है। प्राचीन काल में बच्चों को मानवता और नैतिक जीवन मूल्यों को अपने जीवन में ग्रहण करने की प्रेरणा व शिक्षा अपने परिवार में बड़े बुजुर्गों से प्राप्त होती थी। मूलतः सांस्कृतिक शिक्षा का आधार होते थे, माँ-बाप या दादा दादी।

परंतु आज संयुक्त परिवारों का अभाव है। आधुनिक व वर्तमान अर्थव्यवस्था की निरन्तर मूल्य वृद्धि ने नारी को बाहर निकल कर अर्थोपार्जन हेतु विवश कर दिया है, जिससे माता-पिता जीविकोपार्जन में व्यस्त रहते है, घर में बच्चों की निगरानी के लिए आया छोड़ देते है। जिससे वे पारिवारिक संस्कृति को स्पर्श नहीं कर पाते हैं।

साथ ही आज का दाम्पत्य एकांगी रहना पसन्द करता है, परन्तु किसी हद तक दाम्पत्य एकांगी परिवार सांस्कृतिक अराजकता फैलाने में पीछे नहीं है। माँ-बाप बाह्य आधुनिक तंत्र की घुटन, तनाव को घर में लाते है, जिससे अनायास ही बच्चे भी उसके नीचे दब से जाते हैं। परस्पर सौहार्द्र, मेल मिलाप व्यक्ति के जीवन के वे अनिवार्य अंग हैं जो संयुक्त परिवार में ही प्राप्त होते हैं। ऐसा न होने पर बच्चा एकांगी महसूस करता है। उसी एकाकीपन को वह समाज में प्रसारित करता है।

लेखिका चंद्रकांता ने अपने उपन्यास 'बाकी सब खैरियत है' में दर्शाया है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय परिवार में विघटन की स्थितियाँ काफी तेजी से गतिशील हुई हैं जिसका मूल कारण है 'आर्थिक असंतुलन' परिवार में दो भाई यदि बीनू-अनु दोनों के आर्थिक स्तर असमान हैं तो माता-पिता भी भेदभाव करते हैं। पारिवारिक विघटन में युवा पीढ़ी के स्वातंत्र्य बोध के साथ-साथ आर्थिक असंतुलन भी इसका मूल कारण है। अनु आर्थिक रूप से सम्पन्न है, बीनू कम सम्पन्न। इसलिए बीनू की पत्नी पारुल को हीन भावना का शिकार होना पड़ता है। इसलिए वह कहती है-

''माँ को बार-बार नोटों की गड्डियाँ दिखाकर तुम माया महाठगिनी का प्रताप न दिखाते तो अपनी बीमारी और तमाम शिकायतों के बावजूद वह शायद अपनी नियति को कम करने की कोशिश करती ओर हमारी सेवाओं को कोई गरिमा मिल जाती।'' (पृ- 146)

इस प्रकार समाज और परिवार का संबंध संवेदनाओं पर आधारित है। संवेदनाओं के मर जाने पर यह संबंध समाप्त हो जाते है। संयुक्त परिवारों में भी जो घुटन की स्थिति है, उसका कारण भी विदेशी प्रभाव है। विदेशी सभ्यता एवं दर्शन का भारतीय साहित्य पर जो प्रभाव पड़ा है उसे शिवानी, कृष्णा सोबती, अमृता प्रीतम, चंद्रकांता आदि सभी महिला कथाकारों ने अपनी रचनाओं में उभारने का प्रयास किया है।

महिला लेखिकाओं में भारतीय संस्कृति को पोषिका महादेवी वर्मा के काव्य में आध्यात्मिक भावनाओं को प्रधानता मिली है। वे आध्यात्मिकता के माध्यम से मानवीय परिष्कार करती है। अनुभूति की सच्चाई, सहानुभूति की गहराई, प्राणीमात्र के साथ तादात्म्य कर सकने की व्यापक आत्मीयता इनकी सबसे बड़ी विशेषता है।

आधुनिक युग में कन्या को जन्म देना पारिवारिक कसैलेपन में वृद्धि करता है। यह एक प्रकार का सामाजिक कोढ़ है जिसे महादेवी ने परिचारिका 'भक्तिजन' के माध्यम से चित्रित किया है।

वर्तमान समय में दहेज की प्रथा का त्याग हम नहीं कर सके हैं, अतः वह नारी के पतन का कारण है। लेखिकाओं ने इससे मुक्ति के कारण के सार्थक प्रयास अपनी कृतियों में किए हैं।

निष्कर्ष

आज युगों की पोषित संस्कृति ह्रास और उपभोग के नीचे दब गई है। इससे पूर्व की लोग उसका मर्सिया पढ़ने लगे, विज्ञान और तकनीकी ज्ञान के साथ-साथ अध्यात्म के बल पर हमें उसमें नई शक्ति का संचार करना जरूरी है। सांस्कृतिक संक्रमण समाप्त करने के लिए घर परिवार, शिक्षा संस्थान, कार्यालयों आदि सभी को नैतिक उत्थान का सृजनात्मक आधार बनाना जरूरी है जो जन-जन की पीड़ा को समझ कर उसे जाति, वर्ण, संप्रदाय की संकीर्णताओं से मुक्त करके राष्ट्रीयता के सूत्र में पिरोए। ऐसे में महिला लेखन का उत्तरदायित्व और अधिक बढ़ जाता है। यह तभी संभव है जब यह अनुभव समग्र समूह मन से जुड़े। बुद्ध, महावीर, अशोक, कबीर, स्वामी दयानंद, विवेकानन्द, महात्मा गांधी ने अपने समय यह कर दिखाया। जरूरत है नवमानव के संयोजन और सांस्कृतिकता से ओतप्रोत साहित्य रचने की, जो समाज को नई दिशा दे सके। महिला लेखन इस दिशा में सार्थक प्रयास कर रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. मन्नु भंडारी - आपका बेटी।
2. मंजुल भगत - तिरछी बौछार।
3. चंद्रकांता - बाकी सब खैरियत है।
4. प्रतिनिध गद्य रचनाएँ - महादेवी वर्मा।
5. भारत का सांस्कृतिक इतिहास - हरिदत्त।
6. भारतीय संस्कृति के स्वर - महादेवी वर्मा।
7. भाषा और संस्कृति - डॉ- भोलानाथ तिवारी।
8. ममता कालिया - भविष्य का स्त्री विमर्श।
9. नमिता सिंह - स्त्री-प्रश्न।

संदर्भ

1. लेखिका निरुपमा सेवती - पतझड़ की आवाजें, पृ. 43.
2. लेखिका मंजुल भगत - उपन्यास तिरछी बौछार।
3. लेखिका चंद्रकांता - बाकी सब खैरियत है, पृ. 146.